01_hilal_final+++_Layout 1 1/6/2014 3:20 PM Page 487

मुज़फ़्फ़रनगर 2013

राजनीतिक-समाजशास्त्र के आईने में

हिलाल अहमद

सामयिक

I

पश्चिमी उत्तर प्रदेश के मुज़फ़्फ़रनगर इलाक़े में अगस्त-सितम्बर, 2013 में हुए साम्प्रदायिक दंगे को दो तरह से बताया और समझा गया है। अंग्रेज़ी, हिंदी-उर्दू प्रिंट/इलेक्ट्रॉनिक मीडिया और तथ्यान्वेषण टीम की रपटों ने इस हिंसा का एक घटना-प्रधान विश्लेषण पेश किया जिसमें यह तथ्य उभर कर आया कि इस इलाक़े में जुलाई के बाद से ही तनाव बढ़ने लगा था। रमज़ान के महीने के बाद कुछ स्थानों पर छोटी-मोटी वारदातों की ख़बरें भी आयी थीं। लेकिन अगस्त के आख़िरी हफ़्ते में स्थिति ज़्यादा बिगड़ गयी। मूल घटना मुज़फ़्फ़रनगर ज़िले के कवाल गाँव की है। दो जाट लड़कियों के साथ इस मुसलमान बहुल गाँव में छेड़-छाड़ की गयी। वैसे तो इस गाँव के रास्ते से गुज़रते हुए क्षेत्र के एकमात्र कन्या विद्यालय जाती लड़कियों के साथ छेड़-छाड़ की यह कोई नयी घटना नहीं थी; लेकिन इस बार मामला बिगड़ गया। इन दोनों लड़कियों के भाइयों ने छेड़ने वाले लड़के की शिनाख़्त की और उसके घर पहुँच गये। रपटों के अनुसार लड़की के भाइयों ने लड़के को घर से बाहर बुला कर उसकी हत्या कर दी। इस समय तक गाँव के अन्य लोग भी वहाँ जमा हो गये

01_hilal_final+++_Layout 1 1/6/2014 3:20 PM Page 488

थे। इस समूह ने लड़की के भाइयों की पिटाई शुरू कर दी जिसकी वजह से ये दोनों लड़के भी मौक़े पर ही मारे गये।[1] पारिवारिक सम्मान और पुश्तैनी रंजिश के नाम पर होने वाली हत्याओं के सिलसिले हों या फिर प्रेम विवाह करने वाले नवविवाहित लड़के-लड़कियों को मार डालने के वाक़यात, मुज़फ़्फ़रनगर में इस तरह की आपराधिक हिंसा न तो नयी है और न ही चौंकाने वाली। लेकिन इस बार मामला महज़ पारिवारिक सम्मान तक सीमित नहीं रहा। आगे के घटनाक्रम ने इस झगड़े को पिछले दस वर्षों में हुए सबसे भयानक साम्प्रदायिक दंगे में तब्दील कर दिया।[2]

रपटों के अनुसार प्रशासन ने इस हिंसक घटना के बाद इलाक़े में दफ़ा 144 लगा दी ताकि कोई भी सामूहिक वारदात न हो और स्थिति पर नियंत्रण बना रहे। लेकिन 30 अगस्त, 2013 को जुमे की नमाज़ के बाद कांग्रेस, बहुजन समाज पार्टी और प्रदेश में सत्तारूढ़ समाजवादी पार्टी के मुसलमान नेताओं ने मुज़फ़्फ़रनगर शहर के मुख्य चौक पर एक सभा की। टीवी रपटों के मुताबिक़ यह सभा पूर्व-आयोजित नहीं थी, बल्कि इन नेताओं ने जुमे के बाद बाहर आते नमाज़ियों को पोर्टेबल लाउडस्पीकर से सम्बोधित करना शुरू कर दिया। हालाँकि इन नेताओं के इस मौक़े पर दिये गये बयानों का विस्तृत विवरण सार्वजनिक नहीं हो पाया, पर इतना तय है कि इस सभा के कारण ज़िले में पहले से मौजूद साम्प्रदायिक तनाव बढ़ गया। इस बीच एक और वाक़या हुआ। किसी ने जाट युवकों के क़त्ल के वीडियो के नाम पर एक फ़र्ज़ी एसएमएस पूरे ज़िले में मोबाइल फ़ोन नेटवर्क के ज़रिये प्रसारित कर दिया। यह वीडियो सोशल मीडिया पर चलता रहा, हालाँकि बाद में यह पता चला कि यह जाली था और इसका कँवल गाँव की घटना से कोई संबंध नहीं है। पर तब तक स्थिति बेहद ख़राब हो चुकी थी। रपटें बताती हैं कि तब तक स्थानीय हिंदू दक्षिणपंथी संगठन सक्रिय हो चुके थे। 31 अगस्त को ज़िले के जाट बहुल इलाक़े में एक सभा हुई जिसकी परिणति सात सितम्बर की महापंचायत में हुई। इस महापंचायत में भाजपा के कई नेताओं ने भाग लिया और अंदेशे के मुताबिक़ बेहद भड़काऊ भाषण दिये। सभा की समाप्ति पर जब लोग वापस जा रहे थे तब उन पर हमला हुआ और हिंसा के इस पहले चरण में बारह लोग मारे गये। स्थिति से निबटने के लिए प्रशासन ने सेना की मदद ली परंतु तब तक हालत क़ाबू से बाहर हो चुके थे। नियोजित हिंसा अगले दो दिन तक जारी रही। आधिकारिक तौर पर दोनों समुदायों के 39 लोग मारे गये और बड़ी संख्या में लोगों को शरणार्थी कैम्पों में पनाह लेनी पड़ी।

मीडिया रपटों द्वारा प्रस्तुत मुज़फ़्फ़रनगर हिंसा का यह विवरण चंद बुनियादी सवालों के गिर्द घूमता दिखता है। यह सवाल बार-बार उठाया गया कि जब इलाक़े में दफ़ा 144 लगी हुई थी और ज़िले में पहले से ही साम्प्रदायिक तनाव था तब राजनेताओं और दक्षिणपंथी संगठनों को रैलियाँ करने की इजाज़त कैसे मिल गयी? क्या प्रशासन ने जानबूझ कर तनाव को हिंसा में परिवर्तित होने का

---

[1] यहाँ इस बात का उल्लेख करना ज़रूरी है कि इस घटना को कई तरह से बताया गया है. यहाँ तक कि पुलिस की एफ़आईआर में इस झगड़े की वजह मोटर साइकिल संबंधी विवाद दर्ज है. लेकिन टीवी रपटों और सेंटर फ़ॉर पॉलिसी एनालिसिस की तथ्यान्वेषण टीम की रपट के अनुसार घटना का यह विवरण सबसे ज़्यादा विश्वसनीय है. देखें, आरएफ़एफ़टी : रिपोर्ट ऑफ़ द फ़ैक्ट फ़ाइंडिंग टीम : मुज़फ़्फ़रनगर 2013 : वायलेंस बाइ पॉलिटिकल डिज़ाइन, http://www.milligazette.com/news/9286-muzaffarnagar-riots-2013-violence-by-political-design, (19 सितम्बर, 2013 को देखी गयी).

[2] आधिकारिक आँकड़ों की नज़र से देखें तो गुजरात के 2002 के दंगों और असम की 2011 की घटनाओं के बाद यह इस दशक का सबसे बड़ा साम्प्रदायिक दंगा है. सरकारी सूत्रों के अनुसार इस हिंसा में 39 लोगों की जान गयी और तक़रीबन 10,000 लोग बेघर हुए. लेकिन तथ्यान्वेषण टीम की रपट के अनुसार पचास से ज़्यादा लोग मारे गये और लगभग 50,000 लोगों ने अपने घर छोड़ कर शरणार्थी कैम्पों में पनाह ली. देखें, मुज़फ़्फ़रनगर, वही.

[4] जी.के. लिटन (1996), 'इनक्ल्यूसिव व्यू ऑफ़ रिलीजन : अ रूरल डिस्कोर्स इन उत्तर प्रदेश', *इक़नॉमिक ऐंड 4 जू*

01_hilal_final+++_Layout 1 1/6/2014 3:20 PM Page 489

बताया गया कि यह दंगा समाजवादी पार्टी और भाजपा के द्वारा हिंदू/मुसलमान वोटों की ख़ातिर सुनियोजित साम्प्रदायिक ध्रुवीकरण की साज़िश का नतीजा है। यह दलील भी दी गयी कि दंगों के दौरान कांग्रेस के निष्क्रिय बने रहने की वजह यह थी कि केंद्र सरकार भ्रष्टाचार और बढ़ती महँगाई जैसे आमफ़हम मुद्दों से लोगों और मीडिया का ध्यान हटाना चाहती थी। कुछ विश्लेषकों ने इन दंगों को जाट बहुल इलाक़े में भाजपा की सेंध के तौर पर पेश किया। दिलचस्प बात यह है कि इन सम्भावनाओं को 'तर्क' और 'निष्कर्ष' के रूप में पेश किया गया।

मौक़ा दिया? जिस समय हिंसा अपने चरम पर थी तब उन नेताओं को हिरासत में क्यों नहीं लिया गया जिनके नाम पुलिस की एफ़आईआर में मौजूद थे। इन सवालों के ज़रिये पर्दे के पीछे होने वाली सम्भावनाओं की चर्चा भी हुई। यह बताया गया कि यह दंगा समाजवादी पार्टी और भाजपा के द्वारा हिंदू/मुसलमान वोटों की ख़ातिर सुनियोजित साम्प्रदायिक ध्रुवीकरण की साजिश का नतीजा है। यह दलील भी दी गयी कि दंगों के दौरान कांग्रेस के निष्क्रिय बने रहने की वजह यह थी कि केंद्र सरकार भ्रष्टाचार और बढ़ती महँगाई जैसे आमफ़हम मुद्दों से लोगों और मीडिया का ध्यान हटाना चाहती थी। कुछ विश्लेषकों ने इन दंगों को जाट बहुल इलाके में भाजपा की सेंध के तौर पर पेश किया। दिलचस्प बात यह है कि इन सम्भावनाओं को 'तर्क' और 'निष्कर्ष' के रूप में पेश किया गया।[3]

मुज़फ़्फ़रनगर की हिंसा एक अन्य तरीक़े से भी समझी गयी। घटना–प्रधान प्रस्तुतीकरण के बरक्स इन दंगों को व्यापक राजनीतिक परिप्रेक्ष्य में रख कर देखने का आह्वान किया गया। भाजपा के प्रधानमंत्री पद के उम्मीदवार के रूप में नरेंद्र मोदी के नाम की औपचारिक घोषणा, पिछले कुछ समय से उत्तर भारत में हिंदू और मुसलमानों के बीच बढ़ता तनाव, और विश्व हिंदू परिषद (विहिप)

---

[3] सेंटर फ़ॉर पॉलिसी एनालिसिस की तथ्यान्वेषण टीम की रपट में ये सम्भावनाएँ निष्कर्ष की तरह रखी गयी हैं। देखें, मुज़फ़्फ़रनगर, वही.

की 84 कोसी अयोध्या यात्रा को मुज़फ़्फ़रनगर की घटनाओं से जोड़ कर तर्क दिया गया कि हिंदू साम्प्रदायिक राजनीति एक बार फिर सक्रिय हो रही है। इस तरह के विश्लेषण में विमर्श का दायरा 1986–93 के दौर में हुई बाबरी मसजिद-राम मंदिर से जुड़ी बहस और साम्प्रदायिक ध्रुवीकरण की राजनीति के इर्द-गिर्द घूमता रहा।

मुज़फ़्फ़रनगर हिंसा के ये दोनों विश्लेषण नैतिक और राजनीतिक तौर पर बेहद प्रासंगिक हैं, ख़ासकर तब जबकि हिंदुत्व का दक्षिणपंथी सोच पुनः एक नया राजनीतिक स्वरूप ले रहा है। लेकिन इसका अर्थ यह नहीं है कि हम एक बार फिर सेकुलर बनाम साम्प्रदायिक के तयशुदा पैमाने से इन घटनाओं का वर्गीकरण कर अपने विश्लेषण के दायरे को संकुचित कर दें। इसके विपरीत ज़रूरी यह है कि मुज़फ़्फ़रनगर की घटनाओं की विशिष्टता का क्रमवार मूल्यांकन हो। इस प्रकार की बौद्धिक जद्दोजहद के ज़रिये न केवल हम दंगे के घटनाक्रम को इस इलाक़े के बदलते सामाजिक-सांस्कृतिक संदर्भ में रख कर देख पाएँगे बल्कि इस दौरान हिंदुत्व की उभरती हुई पृथकतावादी ज़ुबान के नयेपन को भी समझा जा सकेगा। इस विषय में मैं तीन बिंदु रेखांकित करना चाहता हूँ— मुज़फ़्फ़रनगर ज़िले के जाटों और मुसलमानों का जातिगत ढाँचा और उनकी बदलती धार्मिकता जिससे समुदायों का सार्वजनिक प्रस्तुतीकरण पिछले तीन दशकों में प्रभावित हुआ है; ग्रामीण उत्तर प्रदेश में मोबाइल फ़ोन के प्रचलन के बाद से बदलते सामाजिक सरोकार; तथा भाजपा और विहिप द्वारा इस्तेमाल हिंदुत्व की राजनीति की नयी ज़ुबान, जिसने इन दंगों को या तो कुशासन का परिणाम बताया या फिर हिंदू अस्मिता का सामूहिक प्रकटीकरण।

II

मुज़फ़्फ़रनगर के दंगों पर हुई मीडिया चर्चाओं में धर्म और जाति के जटिल रिश्ते को पूरी तरह से नज़रअंदाज़ किया गया। कुछ संवेदनशील राजनीतिक पर्यवेक्षक इस हिंसा को जाट-मुसलमान झगड़ा बताते रहे, पर मोटे तौर पर दंगे को हिंदू-मुसलमान साम्प्रदायिक द्वंद्व ही कहा गया। मेरा मत है कि पश्चिमी उत्तर प्रदेश के जाट और मुसलमान समुदायों की जातिगत संरचनाओं, बदलते धार्मिक विश्वासों और आपसी रिश्तों को इतने साधारण तरीक़े से नहीं समझा जा सकता। समाजशास्त्रीय शोध से जानकारी मिलती है कि इस क्षेत्र में जाति और धर्म की पहचानें आपस में बेहद पेचीदा तरीक़े से जुड़ी हुई हैं। इसी कारण जातिगत चेतना का धार्मिक विश्वास में परिवर्तित होना एक सम्भव प्रक्रिया है जो बेहद जटिल सामुदायिक पहचानों का निर्माण करती है। दो उदाहरणों के ज़रिये इस बात को स्पष्ट किया जा सकता है।

मेरा पहला उदाहरण जी.के. लिटन के उस शोध पर आधारित है जो उन्होंने मुज़फ़्फ़रनगर के दो जाट बहुल गाँवों में बाबरी मस्जिद विध्वंस के बाद 1993–94 में किया था। लिटन के अनुसार :

> हिंदुत्व के जिस तूफ़ान ने 1990 के बाद से समूचे उत्तर प्रदेश को अपनी जद में कर लिया है, उसकी प्रतिध्वनि इन गाँवों में भी देखी जा सकती है। जाट और ब्राह्मणों में धार्मिक रीति-रिवाज की लोकप्रियता बढ़ने लगी है। गाँव का मंदिर, जो अब से पहले तक सिर्फ़ ब्राह्मण महिलाओं द्वारा कुछ ख़ास मौक़ों पर ही आबाद होता था, अब दोबारा बनाया गया है। यहाँ एक लाउडस्पीकर भी लगा दिया गया है जिससे हर सुबह कीर्तन प्रसारित किये जाते हैं। इस सब परिवर्तन का स्वरूप धार्मिक है और विषयवस्तु राजनीतिक, जिसका उद्देश्य हिंदुओं को जाग्रत करना है।[4]

---

[4] जी.के. लिटन (1996), 'इनक्ल्यूसिव व्यू ऑफ़ रिलीजन : अ रूरल डिस्कोर्स इन उत्तर प्रदेश', इकनॉमिक ऐंड पॉलिटिकल वीकली, खण्ड 31, अंक 23 : 1411–1416.

01_hilal_final+++_Layout 1 1/6/2014 3:20 PM Page 491

यह एक दिलचस्प टिप्पणी है जो न केवल ग्रामीण परिदृश्य में धार्मिकता के बदलते चरित्र को स्पष्ट करती है बल्कि यह भी बताती है कि सामुदायिक पहचान कैसे अपनी सार्वजनिक उपस्थिति दर्ज करने लगती है। जाट और ब्राह्मणों के बीच धार्मिक रीति-रिवाज़ों की लोकप्रियता एक तथ्य है; लेकिन जब इन रीति-रिवाजों का सार्वजनिक प्रदर्शन शुरू होता है तब स्थिति बदल जाती है। इसका अर्थ यह नहीं है कि हिंदू धार्मिकता को महज़ हिंदुत्व की राजनीति के आईने में देख कर छोड़ दिया जाए। निस्संदेह धार्मिक विश्वासों के ज़रिये ही व्यक्ति और समुदाय अपनी सामाजिक आस्थाओं को निर्मित और मजबूत करते हैं। जाति और धार्मिकता का ये पेंडुलम जटिल सामाजिक पहचानों की निर्मिति करता है। यह सही है कि हाल के वर्षों में जाट पहचान मूलतः जाति के रूप में प्रतिबिम्बित हुई है (ख़ासकर आरक्षण के मसले को लेकर)। लेकिन इस पहचान की धार्मिक अभिव्यक्ति का सामूहिक प्रकटीकरण भी इतना ही स्वाभाविक है, जितना हिंदू धार्मिकता का राजनीतिकरण। सात सितम्बर की बहू-बेटी बचाओ महापंचायत का लव जिहादियों से हिंदू अस्मिता की रक्षा करने के आह्वान में बदल जाना इस तथ्य का परिचायक है। इस संबंध में विहिप द्वारा जारी प्रेस विज्ञप्ति अत्यंत प्रासंगिक हो जाती है। अशोक सिंघल द्वारा जारी यह बयान कहता है :

> मुज़फ़्फ़रनगर के कवाल गाँव में दिनांक 27 अगस्त, 2013 को किसान इंटर कालेज से आती हुई हिंदू छात्रा के साथ लव जेहादियों का अपमानजनक व्यवहार ही मुज़फ़्फ़रनगर घटनाक्रम का मूल कारण है। इस घटना ने ही बहू-बेटी बचाओ महापंचायत को जन्म दिया। लव जेहादियों द्वारा गाँव-गाँव शीलहरण की घटनाएँ जब बर्दाश्त के बाहर हो गईं तो उनके विरुद्ध समाज का रौद्र रूप बहू-बेटियाँ बचाओ आंदोलन के रूप में खड़ा हुआ है। ... लव जेहादी अपने को कानून से ऊपर समझने लगे हैं और अपनी हरकतों से उन्होंने पूरे हिंदू समाज को अपनी रक्षा के लिए स्वयं के बल पर खड़े होने को मजबूर किया है। लव जेहाद ने न केवल हिंदुओं अपितु बौद्धों और ईसाइयों को भी आज अपना लक्ष्य बना रखा है। इन शर्मनाक कामांध जेहादियों ने मुसलमान धर्म की रक्षा और विस्तार के नाम पर इसे एक बड़े शस्त्र के रूप में देश भर में हिंदू समाज की कन्याओं, अबलाओं, छात्राओं को पिछले अनेक वर्षों से अपना लक्ष्य बनाया हुआ है।[5]

मेरा दूसरा उदाहरण मुसलमानों के जातिगत ढाँचे और बदलती मुसलमान धार्मिकता से संबंधित है। इस पूरे घटनाक्रम में मुज़फ़्फ़रनगर के मुसलमान समुदाय को एक ख़ुद-शिनाख़्त समरूप समूह के रूप में पेश किया गया। यह स्थापित मुसलमान छवि कई मायने में समस्याग्रस्त है। जाट समुदाय की तरह ही मुज़फ़्फ़रनगर के मुसलमान भी अशराफ़ और अरजाल जातियों में विभाजित हैं। ये जातियाँ केवल सामाजिक वर्गीकरण की परिचायक नहीं हैं, बल्कि मोटे तौर पर अमीर और ग़रीब मुसलमान का फ़र्क़ भी तय करती है। मुसलमान बहुल गाँवों के मोहल्ले, क़ब्रिस्तान और यहाँ तक के मसजिदों का इंतज़ाम भी मुसलमानों में प्रचलित जाति व्यवस्था से संचालित होता है।[6] हाल के वर्षों में इस क्षेत्र में पसमांदा राजनीति का उदय इस संदर्भ में अत्यंत प्रासंगिक है। उत्तर प्रदेश में पिछड़े मुसलमानों को लामबंद करने के उद्देश्य से सक्रिय पसमांदा क्रांति अभियान ने एक बेहद रोचक नारा दिया है : दलित-पिछड़ा एक समान : हिंदू हो या मुसलमान! उल्लेखनीय है यह अभियान अभी भी जारी है और

[5] विश्व हिंदू परिषद की प्रेस विज्ञप्ति : http://vhp.org/press-release/ (19 सितम्बर, 2013 को देखी गयी).

[6] यहाँ स्पष्ट करना ज़रूरी है कि मुसलमानों की जाति-व्यवस्था को हिंदू जाति-प्रथा के नज़रिये से देखना उचित नहीं है.

01_hilal_final+++_Layout 1 1/6/2014 3:20 PM Page 492

इसका पहला चरण अक्टूबर, 2013 में पूरा हुआ है। पसमांदा क्रांति अभियान द्वारा जारी परचा हिंदू-मुसलमान साम्प्रदायिकता और सेकुलरवाद से परे जाकर हिंदू-मुसलमान संबंधों को एक नयी नज़र से परिभाषित करता है :

> पसमांदा आंदोलन जाति को अपनी व्याख्या का मूल आधार बना कर इस देश से हिंदू-मुसलमान झगड़े को ख़त्म कर देना चाहता है। मुस्लिम राजनीति मुसलमानों और दलितों या मुसलमानों और पिछड़ों के चुनावी समीकरण की बात करती है। इसके उलट, पसमांदा राजनीति दलितों और दलितों, पिछड़ों और पिछड़ों और अंततः दलितों-पिछड़ों, चाहे वे हिंदू हों या मुसलमान की सामाजिक और सियासी एकता की बात करती है। उत्तर प्रदेश और बिहार में आजकल 'दलित-पिछड़ा एक समान, हिंदू हो या मुसलमान' का नारा चल निकला है।[7]

यह पर्चा इस बात की ओर भी इशारा करता है कि दलित और पिछड़े मुसलमान समूह साम्प्रदायिक हिंसा से सबसे ज़्यादा प्रभावित होते हैं। यह दलील बेबुनियाद नहीं है। एक अनधिकृत आकलन के मुताबिक मुज़फ़्फ़रनगर हिंसा में मारे गये ज़्यादातर मुसलमान निचली जाति के थे। इस बात का मतलब यह क़तई नहीं है कि दंगे के दौरान मुसलमानों को उनकी जाति पूछ कर मारा गया! निस्संदेह मुसलमानों की इसलामी पहचान उनके क़त्लेआम की बुनियादी वजह रही। लेकिन यहाँ मूल तर्क यह है कि जहाँ एक ओर मुसलमानों के ग़रीब, पिछड़े और लाचार समूह हिंदू साम्प्रदायिकता के निशाने पर हैं वहीं दूसरी ओर सेकुलरवाद का स्थापित विमर्श मुसलमानों की आंतरिक बहुलता की शिनाख़्त से बचना चाहता है।

यदि एक तरफ़ पसमांदा आंदोलन मुसलमान सामाजिक बराबरी की बात कर रहा है तो वहीं दूसरी ओर मुसलमानों के बीच तबलीग़ी जमात द्वारा चलाया जाने वाला धार्मिक बराबरी का विमर्श भी बेहद लोकप्रिय है। दिलचस्प बात यह है कि ये दो परस्पर विपरीत सी दिखने वाली प्रवृत्तियाँ मुज़फ़्फ़रनगर क्षेत्र में मुसलमान पहचान की निर्णायक तत्त्व बन चुकी हैं। यहाँ इस बात का ज़िक्र करना ज़रूरी है कि तबलीग़ी जमात अपने आपको अराजनीतिक समूह बताता है। तबलीग़ी जमात का मूल ग्रंथ *फ़ज़ाइल-ए-अमाल* मुसलमानों को ईमान और दीन की ख़िदमत और मेहनत की दावत देने की बात करता है। जमात के साथियों को दुनियावी मसलों से बचने की ताक़ीद भी की जाती है। लेकिन तबलीग़ के इन स्थापित सिद्धांतों का अर्थ यह नहीं है कि जमात के शुद्ध धार्मिक विमर्श का मुसलमानों की सामाजिक ज़िंदगी पर कोई असर नहीं पड़ता। मुज़फ़्फ़रनगर सहित पूरे उत्तर भारत में तबलीग़ी जमात इसलाम की सबसे सशक्त धार्मिक अभिव्यक्ति बन कर उभरी है। बिना मूँछों के एक मुट्ठी लम्बी दाढ़ी, लंबा कुरता और टख़नों से ऊँचा पायजामा या हरा तहमद, सर पर सफ़ेद जालीदार टोपी और जेब में मिस्वाक, मुज़फ़्फ़रनगर के आम मज़हबी मुसलमान मर्द की स्थापित पहचान बन चुके हैं।[8] इस इसलामी दृश्यमानता का एक अन्य प्रतीक भी है : क्षेत्र के मुसलमान बहुल गाँवों में बनी मसजिदों की बुलंद हरी मीनारें।[9] इस सार्वजनिक इसलामी उपस्थिति के परिणाम स्पष्ट थे : हिंदू

मुसलमानों की जाति-व्यवस्था की अपनी एक विशिष्ट गतिशीलता है, शोषण तंत्र है और राजनीतिक अभिव्यक्ति है. पसमांदा आंदोलन ने इस तथ्य को उजागर किया है. इस विषय के विस्तार के लिए देखें, इम्तियाज़ अहमद (1967), 'द अशराफ़ ऐंड अजलाफ़ कैटेगरीज़ इन इण्डो-मुसलिम सोसाइटी', *इकनॉमिक ऐंड पॉलिटिकल वीकली,* खण्ड 2, अंक 19 : 887+889-891.

[7] *पसमांदा क्रांति अभियान* (2013), प्रकाशक : पसमांदा क्रांति अभियान : 8.

[8] एम्मा टारलो (2010), *विज़िबली मुस्लिम्स : फैशन, पॉलिटिक्स, फ़ेथ,* बर्ग., ऑक्सफ़र्ड.

[9] हिलाल अहमद (2012), 'पब्लिक प्रज़ेंस ऑफ़ मॉस्क्स ऐंड मुस्लिम आइडेंटिटी इन पोस्टकोलोनियल डेलही', *द बुक रिव्यू,* खण्ड 36 : 13-14.

01_hilal_final+++_Layout 1 1/6/2014 3:20 PM Page 493

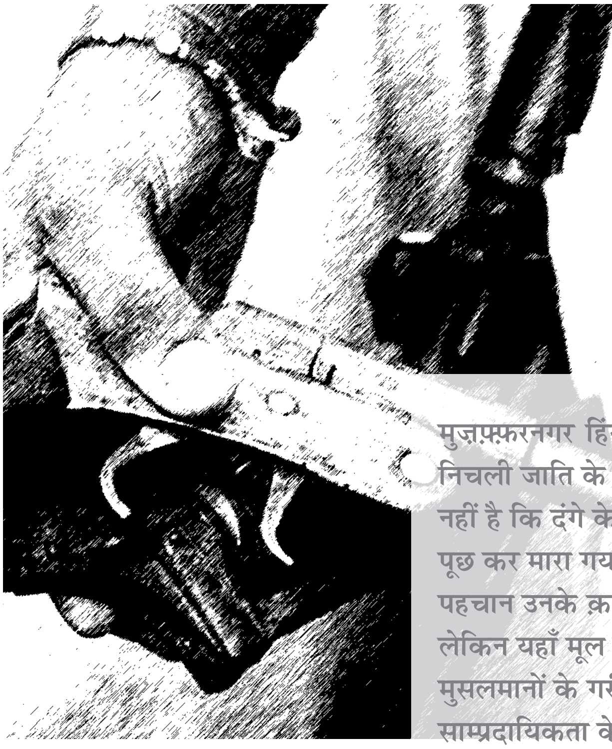

मुज़फ़्फ़रनगर हिंसा में मारे गये ज़्यादातर मुसलमान निचली जाति के थे। इस बात का मतलब यह क़तई नहीं है कि दंगे के दौरान मुसलमानों को उनकी जाति पूछ कर मारा गया! निस्संदेह मुसलमानों की इसलामी पहचान उनके क़त्लेआम की बुनियादी वजह रही। लेकिन यहाँ मूल तर्क यह है कि जहाँ एक ओर मुसलमानों के गरीब, पिछड़े और लाचार समूह हिंदू साम्प्रदायिकता के निशाने पर हैं वहीं दूसरी ओर सेकुलरवाद का स्थापित विमर्श मुसलमानों की आंतरिक बहुलता की शिनाख़्त से बचना चाहता है।

दक्षिणपंथी संगठनों के लिए मुसलमानों को तालिबानी और मुसलमान गाँवों को मिनी पाकिस्तान के रूप में परिभाषित करना ज़रा भी मुश्किल नहीं रह गया था। इस पहलू का ज़िक्र करते हुए सेंटर फ़ॉर पॉलिसी एनालिसिस की तथ्यान्वेषण टीम की रपट कहती है :

> ज़िले के मुसलमानों में सर पर जालीदार टोपी पहनने और दाढ़ी रखने का रिवाज है। लेकिन पिछले कुछ महीने में ऐसी कई घटनाएँ सामने आयी हैं जब मुसलमानों को सार्वजानिक तौर पर यह कह कर दाढ़ी मुड़वाने के लिए मजबूर किया गया कि उनकी दाढ़ी तालिबान समर्थक होने का प्रतीक है और उन्हें जेहादी साबित करती है।[10]

III

अब सवाल यह उठता है कि आख़िर ग्लोबल मीडिया द्वारा प्रचारित प्रसारित जेहादी विमर्श मुज़फ़्फ़रनगर के ग्रामीण क्षेत्रों में अपनी पैठ कैसे और किन स्वरूपों में स्थापित कर पाया? इस प्रश्न के विश्लेषण के लिए यह ज़रूरी है कि हम ग्रामीण इलाक़ों की अपनी बुनियादी समझ बदलें। आज के गाँव 1960–70 के दशक की हिंदी फ़िल्मों में दिखाये जाने वाले गाँव नहीं हैं, विशेषकर पश्चिमी उत्तर प्रदेश में,

[10] मुज़फ़्फ़रनगर, वही.

01_hilal_final+++_Layout 1 1/6/2014 3:20 PM Page 494

जहाँ हाई वे रोड, एस.ई.ज़ेड. के लिए आबंटित भूखंड और मोबाइल नेटवर्क के रडार गाँव, क़स्बे, शहर और महानगर के बीच के जटिल संपर्क/संबंध स्थापित कर रहे हैं।

मोबाइल फ़ोन (ख़ासकर कैमरा वाला मोबाइल फ़ोन) अब गाँवों की नयी ज़रूरत बन कर उभरा है। इसके ज़रिये अब केवल बात ही नहीं होती है बल्कि तस्वीरें भी साझा होती हैं। इन तस्वीरों और वीडियो के आमफ़हम होने के चलते ग्रामीण परिवेश के सामाजिक सरोकारों में कई आमूल परिवर्तन आये हैं। गाँवों में लोग अब न केवल ऐसे दूरस्थ स्थानों, महत्त्वपूर्ण व्यक्तियों और दुर्लभ घटनाओं को देख पाते हैं जिनके बारे में उन्होंने सिर्फ सुना था या पढ़ा था, बल्कि अब तस्वीर/वीडियो के ज़रिये साक्ष्य निर्मित करना भी आसान हो चुका है। तस्वीर प्रमाण भी है और प्रतीक भी। दूसरे शब्दों में कहें तो मोबाइल फ़ोन ने ग्रामीण समाजों में नये कल्पित समुदायों का निर्माण किया है।[11] जाट लड़कों की हत्या का फ़र्ज़ी वीडियो/एमएमएस का प्रसार और उसके बाद सात सितम्बर की भड़काऊ महापंचायत इसी मोबाइल फ़ोन नेटवर्क का परिणाम थी।

मुज़फ़्फ़रनगर की हिंसा को इस नये उभरते ग्रामीण मीडिया विमर्श के परिप्रेक्ष्य में देखना चाहिए। मंदिर से रोज़ सुबह आती कीर्तन की आवाज़, मसज़िद की हरी मीनार और तबलीग़ी जमात के हफ़्तावारी ग़श्त करते दाढ़ी-टोपी वाले मुसलमान, मोबाइल फ़ोन वाले नवयुवक, गाँव की गलियों में खड़ी कारों और मोटरसाइकिलों के पीछे लिखा 'छोरा जाट का' स्लोगन, मोबाइल फ़ोन पर (शील-अश्लील) वीडियो डाउनलोड करने वाली दुकानें, और इन सबके बीच रोज़मर्रा की जद्दोजहद, महँगाई, रोज़गार के संकुचित मौक़े और सिमटते सामाजिक दायरे से उपजी खीज! मेरा मत है कि यह एक ऐसा परिवेश है जिसमें किसी भी छोटी से छोटी रंजिश को आसानी से साम्प्रदायिक स्वरूप दिया जा सकता है।

मंदिर से रोज़ सुबह आती कीर्तन की आवाज़, मस्जिद की हरी मीनार और तबलीग़ी जमात के हफ़्तावारी ग़श्त करते दाढ़ी-टोपी वाले मुसलमान, मोबाइल फ़ोन वाले नवयुवक, गाँव की गलियों में खड़ी कारों और मोटरसाइकिलों के पीछे लिखा 'छोरा जाट का' स्लोगन, मोबाइल फ़ोन पर (शील-अश्लील) वीडियो डाउनलोड करने वाली दुकानें, और इन सबके बीच रोज़मर्रा की जद्दोजहद, महँगाई, रोज़गार के संकुचित मौक़े और सिमटते सामाजिक दायरे से उपजी खीज! मेरा मत है कि यह एक ऐसा परिवेश है जिसमें किसी भी छोटी से छोटी रंजिश को आसानी से साम्प्रदायिक स्वरूप दिया जा सकता है।

IV

यह निष्कर्ष हमें अपने तीसरे और अंतिम बिंदु पर लाता है। क्या मुज़फ़्फ़रनगर के दंगे को हिंदुत्व की राजनीति का रिहर्सल कहा जाना चाहिए? मैं समझता हूँ कि हमें इस तरह के निर्णयात्मक वक्तव्यों से बचना चाहिए। इसके बरक्स हमें देखना यह चाहिए कि अपने को एक परिवार कहने वाले हिंदुत्ववादी संगठनों ने इन दंगों के क्या अर्थ निकाले। भाजपा की प्रेस विज्ञप्ति बेहद नपे-तुले शब्दों में लिखी गयी थी। इस वक्तव्य में समाजवादी पार्टी की प्रशासनिक विफलता केंद्र में रख कर दंगे की भर्त्सना की गयी है। दूसरे शब्दों में कहें तो पार्टी ने इस अवसर को अपने सुशासन के नये नारे को साबित करने के प्रमाण के रूप में लिया। लेकिन सुशासन के इस नारे को सतही तौर पर नहीं समझा जाना चाहिए। यह सही है कि भाजपा का यह नारा आगामी चुनावों में शहरी मध्यम वर्ग को लुभाने के लिए है। परंतु इस नारे का उद्भव राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के पुराने तर्क 'भारत एक

---

[11] इस विषय में ए. गोल्ड द्वारा राजस्थान के गाँव में किया गया हालिया शोध उल्लेखनीय है जिसमें उन्होंने मोबाइल फ़ोन जैसी प्रौद्योगिकी के सामाजिक अर्थों को रेखांकित किया है. देखें, गोल्ड ऐन गॉर्डज़िंस (2012), 'सेंसेज़ ऑफ़ रूरल चेंज', वसुधा डालमिया और रश्मि सदाना (सम्पा.), द *केम्ब्रिज कम्पैनियन ऑफ़ मॉडर्न इण्डियन कल्चर,* केम्ब्रिज युनिवर्सिटी प्रेस, केम्ब्रिज (दक्षिण एशियाई संस्करण).

01_hilal_final+++_Layout 1 1/6/2014 3:20 PM Page 495

हिंदू राष्ट्र है' से हुआ है। इस बात को साबित करने के लिए एक रोचक उदाहरण दिया जा सकता है। भाजपा के प्रधानमंत्री पद के उम्मीदवार नरेंद्र मोदी की आधिकारिक वेबसाइट कहती है :

> सरकार का एक ही धर्म होता है : इण्डिया फ़र्स्ट! सरकार का एक ही धर्म-ग्रंथ होता है : संविधान। सरकार की एक ही भक्ति होनी चाहिए : भारत-भक्ति! सरकार की एक ही शक्ति होती है : जन-शक्ति। सरकार का एक ही उद्देश्य होना चाहिए : 125 करोड़ भारतीयों का भला। सरकार का एक ही नियम होना चाहिए : सब का साथ सब का विकास।[12]

मोदी के इस बहुजन हिताय नारे की पृष्ठभूमि के लिए राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ का एक पुराना पर्चा *व्हाई हिंदू राष्ट्र?* देखा जा सकता है। यह परचा कहता है : इस देश में रहने वाला प्रत्येक व्यक्ति, चाहे शैव हो, शाक्त हो, वैष्णव हो, सिख हो, जैन हो, मुसलमान हो, पारसी हो, बौद्ध हो, या यहूदी हो, वास्तव में हिंदू ही है।[13] हिंदू होने की इस व्यापक परिभाषा को वसुधैव कुटुम्बकम के सीमित संस्करण के रूप में नहीं समझना चाहिए, क्योंकि यहाँ सब को हिंदू घोषित करने का उद्देश्य अल्पसंख्यक/बहुसंख्यक का फ़र्क मिटा कर अल्पसंख्यक अधिकारों का विरोध है। इस बात का एक ज्वलंत उदाहरण संघ की अखिल भारतीय प्रतिनिधि सभा द्वारा 2009 में पारित प्रस्ताव है, जो कहता है :

> धर्म के आधार पर दिये जाने वाले सभी आरक्षण, रियायतें और विशेषाधिकार समाप्त होने चाहिए। यह प्रस्ताव देशवासियों से अपील करता है कि वे समाज को इस तरह के प्रावधानों के ख़तरों से अवगत कराएँ और नीति निर्माताओं पर दबाव डालें ताकि इस तरह के विशेषाधिकार से मुक्ति मिल सके।[14]

लेकिन सुशासन के इस नारे के विपरीत राज्य स्तर के भाजपा नेताओं का विश्लेषण दूसरा रहा। ये नेता एक्शन-रिअक्शन की हिंदुत्व थियरी का सहारा लेकर यह साबित करने कि कोशिश करते रहे कि जो कुछ भी मुज़फ़्फ़रनगर में हुआ वह स्वत: और स्वाभाविक उपजे हिंदू रोष का परिणाम था। उमा भारती ने तो यहाँ तक कह दिया कि यदि भाजपा के नेताओं को गिरफ़्तार किया गया तो राज्य में हिंदू रोष बढ़ेगा जिसे नियन्त्रित करना आसान न होगा। यह वक्तव्य महज़ धमकी नहीं है बल्कि इसके मूल में साम्प्रदायिक ध्रुवीकरण के राजनीतिक निहितार्थ छिपे हैं।

मुज़फ़्फ़रनगर हिंसा पर विहिप ने शायद सबसे अधिक विवादास्पद वक्तव्य दिया। लव जेहाद से हिंदू अस्मिता की रक्षा करने का संकल्प लेते हुए विहिप ने दावा किया कि :

> इस समस्त काण्ड से एक शिक्षा लेने की आवश्यकता है कि लव जेहादियों पर क़ानूनी रोक लगाई जाए और क़ानून का सख़्ती से पालन किया जाए। इस घटना में शामिल हत्यारे लव जेहादियों को कठोर दण्ड दिया जाए अन्यथा स्वाभिमानी हिंदू को इच्छा न होते हुए भी अपनी रक्षा अपने बल पर करने के लिए बाध्य होना पड़ेगा, जो शर्मनाक है और क़ानून से बनी इस सरकार द्वारा सम्भव नहीं हो पा रहा है।[15]

इस प्रस्तावना में हिंदुस्तानी मुसलमानों को देश, समाज और संस्कृति का सबसे बड़ा दुश्मन बताया जा रहा है और इस दुश्मनी का स्रोत है : प्रेम और जेहाद! हिंसा का यह स्पष्टीकरण न केवल

---

[12] नरेंद्र मोदी की वेबसाइट : http://www.narendramodi.in/category/quotes/ (19 सितम्बर, 2013 को देखी गयी).

[13] राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की वेबसाइट : http://www.archivesofrss.org/index.php?option=com_book&task=showFile&bookid=8 (19 सितम्बर, 2013 को देखी गयी).

[14] राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की वेबसाइट : http://www.archivesofrss.org/index.php?option=com_prastav (19 सितम्बर, 2013 को देखी गयी).

[15] विश्व हिंदू परिषद की प्रेस विज्ञप्ति, वही.

01_hilal_final+++_Layout 1 1/6/2014 3:20 PM Page 496

साम्प्रदायिक पूर्वाग्रहों पर टिका है बल्कि इसके बीच से आती पितृसत्तात्मक प्रतिध्वनि भी साफ़ सुनी जा सकती है।

मेरा मत है कि राजनीतिक हिंदुत्व के इन तीन नये मुहावरों सुशासन, स्वत:स्फूर्त हिंदू रोष और हिंदू अस्मिता की रक्षा से किसी भी तयशुदा तर्क तक पहुँचना अभी सम्भव नहीं है। ये मुहावरे अभी पूरी तरह से परिपक्व नहीं हैं और इनके ज़रिये राजनीति करने वाले खिलाड़ी अभी तक अपनी राजनीतिक ज़मीन की निश्चित पहचान नहीं कर पाये हैं। परंतु इतना तय है कि हिंदू दक्षिणपंथी राजनीति ने एक नयी अंगड़ाई ली है। इस नयी हिंदुत्ववादी राजनीति को समझने के लिए हमें 2010 के दशक के आर्थिक-सामाजिक-सांस्कृतिक और तकनीकी संदर्भ, राजनीतिक पहलू, राजनीतिक गतिशीलता और वैचारिक रुझानों को समझना ज़रूरी है अन्यथा एक बार फिर अंग्रेज़ी सेकुलरवाद हिंदुत्व और फ़ासीवाद के बीच समानताएँ तलाशने में उलझ जाएगा और हिंदुत्व की दक्षिणपंथी राजनीति अपने लिए लव जेहाद जैसे मसालेदार तर्क खोजने में सफल हो जाएगी।

संदर्भ

आरएफ़एफ़टी : रिपोर्ट ऑफ़ द फ़ैक्ट फ़ाइंडिंग टीम : मुज़फ़्फ़रनगर 2013 : वायलेंस बाइ पॉलिटिकल डिज़ाइन, http://www.milligazette.com/news/9286-muzaffarnagar-riots-2013-violence-by-political-design, (19 सितम्बर, 2013 को देखी गयी).

इम्तियाज़ अहमद (1967), 'द अशराफ़ ऐंड अजलाफ़ कैटेगरीज़ इन इण्डो-मुसलिम सोसाइटी', *इकनॉमिक ऐंड पॉलिटिकल वीकली,* खण्ड 2, अंक 19.

एम्मा टारलो (2010), *विज़िबली मुस्लिम्स : फैशन,* पॉलिटिक्स, फ़ेथ, बर्ग., ऑक्सफ़र्ड.

गोल्ड ऐन गॉर्डज़िंस (2012), 'सेंसेज़ ऑफ़ रूरल चेंज', वसुधा डालमिया और रश्मि सदाना (सम्पा.), द *केम्ब्रिज कम्पैनियन ऑफ़ मॉडर्न इण्डियन कल्चर,* केम्ब्रिज युनिवर्सिटी प्रेस, केम्ब्रिज (दक्षिण एशियाई संस्करण).

जी.के. लिटन (1996), 'इनक्ल्यूसिव व्यू ऑफ़ रिलीजन : अ रूरल डिस्कोर्स इन उत्तर प्रदेश', *इकनॉमिक ऐंड पॉलिटिकल वीकली,* खण्ड 31, अंक 23.

नरेंद्र मोदी की वेबसाइट : http://www.narendramodi.in/category/quotes/.

फ़रहा नक़वी (2013), 'द चिलिंग फ़ैमिलियरिटी ऑफ़ मुज़फ़्फ़रनगर, द *हिंदू,* Naqvi, Faraha. 2013. The chilling familiarity of Muzaffarnagar. The Hindu.http://www.thehindu.com/opinion/op-ed/the-chilling-familiarity-of-muzaffarnagar/article5138832.ece.

भाजपा की प्रेस विज्ञप्ति : http://bjp.org/images/pdf_2013/press_h_dr_sudhanshuji_sep_11_13.pdf.

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की वेबसाइट : http://www.archivesofrss.org/index.php?option= com_book&task= showFile&bookid=8.

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की वेबसाइट : http://www.archivesofrss.org/index.php?option=com_prastav.

विश्व हिंदू परिषद की प्रेस विज्ञप्ति : http://vhp.org/press-release/

पसमांदा क्रांति अभियान (2013), प्रकाशक : पसमांदा क्रांति अभियान : 8.

हिलाल अहमद (2012), 'पब्लिक प्रज़ेंस ऑफ़ मॉस्क्स ऐंड मुस्लिम आइडेंटिटी इन पोस्टकोलोनियल डेलही', द *बुक रिव्यू,* खण्ड 36.